आते-आते मैं बांग्लादेश का राष्ट्रीय नागरिक बना। राष्ट्रीयता ज़्या इस तरह से बदलती जाती है। मेरा मानना है कि नागरिकता बदल सकती है, राष्ट्रीयता नहीं बदल सकती। कई महापुरूषों ने कहा कि राजा आएंगे, राजा जाएंगे। समाज निरंतन चलता रहता है। समाज में कहीं परिवर्तन नहीं आता समाज, समाज रहता है। वह चिरंतन है, वह स्थाई है। राज्य अस्थिर कल्पना है। कभी उलट-पुलट होते हैं, बदलते हैं, नष्ट होते हैं, फिर पैदा होते हैं, फिर नष्ट होते हैं। यह प्रक्रिया चलती रहती है। हम सब लोग मानते हैं कि लोग राष्ट्र-राज्य, इस कल्पना में अन्तर कर नहीं पाए और इसलिए राज्य बदलते ही राष्ट्रीयताएं बदलने लगी। इस पर विचार

पंडित दीनदयाल और नानाजी इन दोनों महापुरूषों का ये जन्म शताब्दी वर्ष है। संयोग है कि एक ही समय में इन दोनों महापुरूषों ने इस पुण्यभूमि पर जन्म लिया और इनके सानिध्य में हम सबको रहने का कुछ अवसर प्राप्त हुआ। एक महापुरूष के बारे में कहा जा सकता है कि उन्होंने गहराई से अध्ययन, चिन्तन किया और विश्व के सामने एकात्म मानवदर्शन के रूप में अपने भारत के चिन्तन की प्रस्तुति दी और दूसरे महापुरूष ऐसे रहे जिन्होंने उस चिन्तन को समझकर, जमीन पर उतारने का प्रयास किया।

करना होगा। हजारों वर्षों से यहां का समृद्ध जीवन चलता आया है। हमने उतार-चढ़ाव जरूर देखे, लेकिन कई बातों में परिवर्तन नहीं हुआ। आज भी हम थोड़ा विचार करते हुए इन्टरनेट पर जाकर देख सकते हैं कि कल्चरल हिस्ट्री आफ पाकिस्तान एक वेबसाईट है। जो लिखता है कि पाकिस्तान तक्षशिला के प्रति गौरव का भाव व्यज़्त करता है। कल्चरल हिस्ट्री आफ पाकिस्तान, कल्चरल हिस्ट्री आफ भारत में कुछ अन्तर है ज़्या ? ऐसी कई बातें हमको ध्यान में आएंगी। इसलिए हम कह सकते हैं कि केवल राज्यों में परिवर्तन हुआ है। दो राज्य अलग-अलग बन गए। इसे ही राजनैतिक राष्ट्रवाद कहते हैं, लेकिन सोचने का प्रश्न ये है कि ज़्या सांस्कृतिक दृष्टि से हम अलग हुए हैं। इसलिए कभी-कभी लगता है कि इन संकल्पनाओं को बहुत बड़ी मात्रा में स्पष्ट होने की आवश्यकता है। विश्व के कुछ चिन्तकों ने कहा कि राष्ट्र एक नकारात्मक कल्पना है। यह उनको कैसे लगा कि राष्ट्र कहने से प्रखरतावाद एवं अलगाववाद का भाव निर्माण होता है। हमारी सीमाएं मस्तिष्क पर कट्टरता का जन्म देती हैं। इस भूमि पर, इस सीमा में रहने वाले अपने आपको कट्टर मानते हैं। दूसरों के प्रति असहिष्णुता का भाव निर्माण होता है। उस भूमि में रहने वाले जो अल्पसंज़्यक माने जाते हैं उन पर अन्याय, अत्याचार करने का जाने-अनजाने में अधिकार प्राप्त होता है। स्वाभाविक रूप से राष्ट्र को लेकर साम्राज्यवादी, विस्तारवादी सोच विकसित होती है। इसलिए कुछ लोगों को लगा कि राष्ट्र की संकल्पना नकारात्मक है, युद्ध की तरफ ले जाने वाली है, संकुचित है, कट्टरता का भाव निर्माण करती है, असहिष्णुता का भाव निर्माण करती है।

इसके विपरीत भारतीय मनीषियों ने कहा कि यह अत्यन्त सकारात्मक है। हजारों वर्षों से अगर हम भारत के सन्दर्भ में देखते हैं तो भारत की राष्ट्र की कल्पना कभी नकारात्मक नहीं रही, सकारात्मक रही। हमारी संस्कृति कभी भी विस्तारवादी सोच की नहीं रही। पूरा इतिहास देखा जा सकता है, यहां से कभी कोई सेना लेकर दूसरों की भूमि पर आक्रमण करने नहीं गया। जो लड़ाईयां हुईं, वह आत्मरक्षा के लिए की गई। राष्ट्र में ऋषि-मुनि हमेशा सकारात्मक विचार, सांस्कृतिक सोच और जीवन-दृष्टि लेकर गए। हमारी राष्ट्र की संकल्पना जोड़ने वाली है। विश्व में जो अंतर पैदा हो रहा था, उसे खत्म करने के लिए भारत के लोगों ने 'वसुधैव कुटुज़्बकम' का नारा दिया।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के द्वितीय सरसंघचालक परमपूज्यनीय श्रीगुरूजी ने कहा था कि राष्ट्रवाद दो प्रकार के होते हैं। एक है सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और दूसरा राजनैतिक राष्ट्रवाद। अब इसे भी समझने की आवश्यकता है। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की कल्पना करते समय दुनिया के